डॉ. गोपाल राय और हिन्दी कथालोचना

संपादक

पूनम सिन्हा

डॉ० गोपाल राय और हिन्दी कथालोचना

संपादक
पूनम सिन्हा

सह-संपादक
डॉ० त्रिविक्रम नारायण सिंह

प्रतिभा प्रकाशन

ISBN : 978-81-941225-8-6

प्रथम संस्करण

2020

सर्वाधिकार ©

संपादकाधीन

प्रकाशक

प्रतिभा प्रकाशन

केदारनाथ रोड (बिजली ऑफिस के पास)

मुजफ्फरपुर-842001

फोन : 9955658474, 9572980709

अक्षर-संयोजन

अमित कुमार कर्ण

आवरण

शशिकांत सिंह

मुद्रक

जी० एस० ऑफसेट, दिल्ली

मूल्य

350.00 (तीन सौ पचास रुपये)

Dr. Gopal Rai Aur Hindi Kathalochana

Rs. 350.00

अनुक्रम

संपादकीय -

धरोहर :

भाषा चिन्तन : शुद्ध भाषा की खोज — **गोपाल राय** –13

स्मृति-शेष बंधुवर — **निर्मला जैन** –22

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी: डॉ० गोपाल राय — **हरदयाल** –27

समावेशी दृष्टि से लिखा हिन्दी उपन्यास का इतिहास — **मैनेजर पाण्डेय** –34

विद्धांग–बद्ध–कोदण्ड–मुष्टि–खर रुधिर-स्राव — **सत्यकाम** –41

उपन्यास की संरचना : संदर्भ-प्रेमचंद के उपन्यासों की यथार्थवादी संरचना — **डॉ. पूनम सिन्हा** –54

हिन्दी कहानी का इतिहास-2 साहित्य भी इतिहास भी — **डॉ. पूनम सिन्हा** –65

इतिहासकार गोपाल राय — **अमिता पाण्डेय** –71

आलेख :

कथा-आलोचना की सैद्धांतिकी और डॉ० गोपाल राय — **डॉ. रेवती रमण** –77

डॉ० गोपाल राय की कथालोचना — **डॉ. चंद्रभानु प्रसाद सिंह**–81

नलिनविलोचन शर्मा एवं गोपाल राय की साहित्यदृष्टि : संदर्भ-गोदान — **डॉ. सुधा बाला** –85

हिन्दी उपन्यासालोचन के हिमालय : डॉ० गोपाल राय — **डॉ. जंगबहादुर पाण्डेय** –93

गोपाल राय की सृजनात्मकता: कथालोचना की विस्तृत भूमि — **डॉ. संजय पंकज** 98

हिन्दी कहानी का इतिहास लेखन और डॉ० गोपाल राय — **डॉ. त्रिविक्रम ना.सिंह** 102

उपन्यास की संरचना और डॉ० गोपाल राय — **डॉ. रामेश्वर द्विवेदी** 109

गोपाल राय : एक दृष्टि डॉ. राजीव कुमार झा 116

शेखर : एक जीवनी और गोपाल राय की विवेचना डॉ. धीरेन्द्र प्रसाद राय 121

मैला आँचल की आलोचना:
डॉ० गोपाल राय डॉ. कल्याण कुमार झा 133

उपन्यास आलोचना की परंपरा और गोपाल राय डॉ. संत साह 137

मैला आँचल में लोकविश्वास के तत्त्वों की
पहचान : डॉ० गोपाल राय डॉ. साक्षी शालिनी –140

साहित्येतिहास-लेखन की कठिनाइयाँ और
डॉ० गोपाल राय डॉ. राकेश रंजन –144

डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में मैला आँचल में
स्वातंत्र्योत्तर राजनीति की प्रकृति डॉ. सुशांत कुमार –153

डॉ० गोपाल राय की औपन्यासिक आलोचना
का अनुशीलन डॉ. संध्या पाण्डेय –157

आंचलिक उपन्यास की अवधारणा और गोपाल राय डॉ. चित्तरंजन कुमार –163

उपन्यास शिल्प और गोपाल राय का विवेचन सोनल –170

गोदान की आलोचना प्रक्रिया और कथालोचक
गोपाल राय अखिलेश कुमार –176

हिन्दी उपन्यासालोचन और डॉ० गोपाल राय डॉ. माधव कुमार –180

कथा आलोचक डॉ० गोपाल राय डॉ. पल्लवी –185

डॉ० गोपाल राय : समीक्षा और साहित्याब्दकोश समीक्षा सुरभि –188

कथालोचक डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में
विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ डॉ. प्रीति कुमारी –200

डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में मैला आँचल की
भाषागत विशिष्टता डॉ. इंदिरा कुमारी –205

हिन्दी उपन्यास का इतिहास और गोपाल राय पल्लवी कुमारी –211

उपन्यास की पहचान मैला आँचल के संबंध
में गोपाल राय की विवेचना डॉ. अंशु कुमारी –216

हिन्दी कहानी का इतिहास और डॉ० गोपाल राय विकास कुमार –220

संस्मरण :

मैं और गोपाल राय उषाकिरण खान –225

इतिहासकार-कोशकार डॉ० गोपाल राय :

एक संक्षिप्त परिचय	**भगवानदास मोरवाल**	–227
सुखद स्मृतियों में गोपाल राय	**डॉ. श्रीनारायण प्रसाद सिंह**	–232
साक्षात्कार :		
डॉ० गोपाल राय का साक्षात्कार (समीक्षा से साभार)	**डॉ. पूनम सिन्हा**	–236
प्रो. सत्यकाम का साक्षात्कार :	**डॉ. पूनम सिन्हा**	–243
डॉ० खगेन्द्र ठाकुर का साक्षात्कार : संदर्भ डॉ० गोपाल राय	**डॉ. सुनीता गुप्ता**	–258
डॉ० रामवचन राय का साक्षात्कार : संदर्भ डॉ० गोपाल राय	**डॉ. पूनम सिन्हा** **डॉ. माधव कुमार**	–263
अरुणकमल का साक्षात्कार : संदर्भ डॉ० गोपाल राय	**विनीता कुमारी**	–268
प्रतिवेदन		–271

शेखर : एक जीवनी और गोपाल राय की विवेचना

–डॉ० धीरेन्द्र प्रसाद राय

डॉ० गोपाल राय का लेखन-कर्म उनके शिक्षण-कर्म का परिपूरक रहा है। इसकी परिपूर्ति जब कोई लेखक करता है तो उसके लेखन के हरेक बिन्दु जैसे उस हर लेखकीय बारीकियों को समझाने की उसकी अंतिम कोशिश होती है। अब यह लेखन उस लेखक की गहनता-सहजता के रूप में होनी चाहिए। डॉ० गोपाल राय ने सहज और बोधगम्य उपन्यासों पर तो अपनी समीक्षा प्रस्तुत की ही है, किन्तु उन्होंने 'शेखर : एक जीवनी' जैसे उपन्यास का अध्यापन और एक लम्बे अरसे तक अध्यापनोपरांत 'शेखर : एक जीवनी' को केन्द्र में रखकर 'शेखर : एक जीवनी : मूल्यांकन' नामक पुस्तक लिखी है।

डॉ० गोपाल राय की ख्याति मूलतः कथालोचक और कथालोचन से संबद्ध एक सफल प्राध्यापक के रूप में रही है। बल्कि कहना चाहिए कथालोचना और डॉ० गोपाल राय का लेखन एक-दूसरे का पर्याय बन गया है किन्तु इसके पीछे एक आरंभिक अध्यापकीय पृष्ठभूमि भी रही है। डॉ० गोपाल राय की ही गवाही को आधार बनाकर उपस्थापित करूँ, 'जो पाठक अज्ञेय के उपन्यासकार रूप पर विस्तार के साथ प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक के विचार जानना चाहते हैं वे उसकी 'अज्ञेय और उनके उपन्यास' नामक पुस्तक पढ़ें।"[1] लेखक महोदय का दावा और विश्वास है कि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है, वह इससे पूरा हो गया। लेखक की घोषणा 01 जनवरी, 1986 को होती है और 1974 में मैकमिलन की एक 'मूल्यांकन माला' योजना के अंतर्गत मैंने 'अज्ञेय और उनके उपन्यास' नामक पुस्तक लिखी जो उसी वर्ष छपी थी। दुर्भाग्यवश मैकमिलन की हिन्दी प्रकाशन-योजना कुछ दिनों बाद समाप्त हो गयी और दूसरा संस्करण हल्के संशोधन के साथ 1984 में ग्रंथ निकेतन, पटना से प्रकाशित हुआ। 1987 के

तीन चार दिन में उसका एक रूप लिख डाला, कुछ पेंसिल से, कुछ स्याही मिली तो स्याही से, कुछ अँधेरे में अटकल से कागज पर, [illegible] लिखता चला गया। इसलिए लगा कि यह जो इतना तीव्र अनुभव है [illegible] जाने से पहले इसको लिख लेना चाहिए, फिर यह चाहे जिस रूप में काम आये। या कि मेरे काम न आये, और किसी के काम आये।''

फाँसी की आशंका से घिरे मन की रूमानियत और उस [illegible] को कलमबद्ध करने की बेचैनी को समेटने की हड़बड़ाहट अज्ञेय के वक्तव्य में साफ झलकती है। लेखक के 'विजन' में अंग्रेजी राज ही नहीं, बल्कि सभ्यता से भी मुठभेड़ की अंतर्दृष्टि साफ कौंधती दिखायी दे रही है। इन सब चीजों पर विचार करने से पता चलता है कि अज्ञेय अपने शेखर को आधुनिकता की नई लहर से उसके चरित्र का निर्माण कर रहे थे। वह चरित्र जो किसी भी अवरोध को नहीं मानता–अपने स्वातंत्र्य की राह में खड़े किसी भी बड़ी ताकत से वह लोहा ले सकता है।

डॉ० राय अज्ञेय के 'शेखर' की अन्तर्वस्तु के निर्माण में उन तथ्यों को रेखांकित करते हैं। उनकी लम्बी औपन्यासिक यात्रा के बीच में पड़नेवाले तथ्यों को बड़े ही कम शब्दों में रखने का प्रयास करते हैं। 'शेखर' के निर्माण-प्रक्रिया में अज्ञेय को तीन भागों में प्रकाशित करने की योजना थी किन्तु 'शेखर' की रचना-प्रक्रिया के बीच अर्थात् प्रथम दो भाग तो प्रकाशित हो जाते हैं किन्तु अंतिम भाग नहीं छप पाता है और इसी बीच उनके दो उपन्यास–'नदी के द्वीप' और 'अपने-अपने अजनबी' का प्रकाशन हो जाता है। अज्ञेय के दो उपन्यास तो पूर्ण हो जाते हैं किन्तु 'शेखर : एक जीवनी' के अलावा उनके दो असमाप्त उपन्यास 'मेखल छाया' और 'बीनू भगत' प्रकाशित हुए थे। 'मेखल भगत' 'नया प्रतीक' में धारावाहिक रूप में छपा था। दरअसल अज्ञेय व्यक्ति-चेतना या उसकी संवेदना के उपन्यासकार थे। समाज का व्यापक परिप्रेक्ष्य, उसकी संघर्षपूर्ण जटिल समस्याएँ और अंतर्विरोध, सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक शोषण, आम-आदमी का अस्तित्व संघर्ष, निम्नवर्ग और मध्यवर्ग की जिन्दगी का सैलाब–यह सब अज्ञेय के उपन्यासों का विषय नहीं बनता। डॉ० गोपाल राय अज्ञेय के जीवन बोध को उनके औपन्यासिक अन्तर्वस्तु का समशील मानते हैं। अज्ञेय के जीवन पर दृष्टि डालते हुए वह लिखते हैं–एकांतप्रिय और बहुत सीमित निजी परिवेश के भीतर जीनेवाले लेखक के पास अनुभव की पूँजी नहीं होती जिससे वह बाहर की संघर्षपूर्ण, खुद बताती हुई, दूर दूर तक पसरी जिन्दगी को [illegible]

प्रस्तुत कर सके। अज्ञेय की ईमानदारी इस बात में है कि उन्होंने सामाजिक उपन्यासकार होने का दावा नहीं किया है। डॉ० राय अज्ञेय की [illegible] की औपन्यासिक अवधारणा के बारे में लिखते हैं ''उनका कथन है कि केवल तथाकथित सामाजिक उपन्यासों को ही उपन्यास मानने की अवधारणा को उन्होंने अस्वीकार किया है और व्यक्तिवादी या मनोवैज्ञानिक उपन्यास को उपन्यास के एक महत्वपूर्ण प्रकार के उपन्यास के रूप में प्रतिष्ठित किया है।''[5]

'शेखर : एक जीवनी' एक खोज है, आत्मान्वेषण की खोज, उसके स्वातंत्र्य की खोज। अज्ञेय इस बात को अनेकत्र स्वीकार भी करते हैं। अपने वैयक्तिक निबंध ''आत्मनेपद' में वे लिखते हैं, जैसे 'क्रिस्ताफ' में लेखक एक आत्मान्वेषी के पीछे उसका चित्र खींचता चला है, वैसे ही मैं एक-दूसरे आत्मान्वेषी के पीछे चला हूँ। मुझे इसमें बड़ी दिलचस्पी रही है कि आतंकवादी का मन कैसे बनता है। शेखर की रचना इसी से आरंभ हुई।''[5]

'शेखर : एक जीवनी' एक उपन्यास है। इसकी लेखन शैली आत्मजीवनी या आत्मकथा जैसी है। उस युग में आत्मकथाएँ लिखी जा रही थीं और उन आत्मकथाओं में जातीय आत्मा का अनऔपनिवेशीकरण का नतीजा खुलकर सामने आ रहा था। यशपाल ने भी आत्मकथा लिखी–'सिंहावलोकन'। अज्ञेय अपने लेखन के सच को स्वीकार करते हैं–मैंने भी इस तरह की सामग्री का उपयोग किया और उपन्यास में ही किया है और मैं उन लोगों में हूँ जो समझता हूँ कि आत्मकथा में सच लिखना कठिन है। उपन्यास में अगर कोई सच लिखना चाहे तो ज्यादा आसानी से लिख सकता है। दरअसल शेखर और अज्ञेय की किशोरावस्था की समानताएँ कुछ अधिक हैं। अज्ञेय जान-बूझकर उपन्यास का ढाँचा चुनते हैं। 'शेखर' की भूमिका में अज्ञेय स्वीकार करते हैं–शेखर में मेरापन कुछ अधिक है, इलियट का आदर्श मुझसे निभ नहीं सका है।'' लेखकीय स्वीकारोक्ति There is always a separation between the man who suffers and the artist who creats; and the greater than artist the greater the seperation. (भोगने वाले प्राणी और सृजन करने वाले कलाकार में सदा एक अंतर रहता है और जितना बड़ा कलाकार होता है, उतना ही भारी यह अन्तर होता है।''[6]

कहने की आवश्यकता नहीं कि आदर्श भोगने वाले व्यक्ति और सृजन करने वाले कलाकार के बीच दूर कहीं जाकर टूट जाती है और कहीं

पुनर्स्थापित हो जाती है। शिल्प की द्वंद्वात्मकता अज्ञेय की भोगी ... को व्यक्त करती है और उसे खास बनाती है।

उपन्यास साहित्यकार को व्यक्ति केन्द्रित नहीं होने देता, ... की दुनिया से बाहर फेंक देता है। अपनी प्रकृति को स्वीकार करते ... मानते हैं कि मेरी जैसी दृष्टि है–उसे देखते हुए मैं कवि ... उपन्यासकार नहीं बनूँगा। विधा चयन का मामला स्वतंत्रता का नहीं, ... मनोभूमि से प्रस्थान का मामला है। इसके संबंध में डॉ० राय का कथन ... यह लिखकर स्वीकार कर चुके थे कि "शायद कविता ही उनकी ... और व्यवहार में भी 1960 के बाद उन्होंने उपन्यास और कहानी लिखना छोड़ दिया था। कविता से इतर प्रकाशन का हवाला देते हुए डॉ० राय ... लिखते हैं सचमुच कविता उनकी सीमा थी। यदि ऐसा हो, तो भी यह स्वीकार करना ही होगा कि अज्ञेय के कथा-साहित्य को छोड़कर हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं लिखा जा सकता।"[7]

सचमुच अज्ञेय का कथा-साहित्य आज भी अपनी ... की कहानी दुहराती है।

ऐसा कोई उपन्यास का कोना नहीं जिसके एक-एक बिन्दु पर डॉ० गोपाल राय दृष्टिपात नहीं करते और अपनी आलोचकीय टिप्पणियों में वस्तु की जटिलताओं को स्पष्ट नहीं करते हैं। डॉ० गोपाल राय अज्ञेय के लेखकीय निर्देशन में आगे बढ़ते हुए वह लिखते हैं कि शेखर से हमारी मुलाकात जेल की कालकोठरी में होती है, जहाँ वह सजा पाये हुए कैदी के रूप में अपनी मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा है। मृत्यु जैसे आसन्न विकट समय में भी भावात्मक बौद्धिकता की डोर नहीं छोड़ता, उसकी मृत्यु निकट है, ध्रुव है, पर यह मृत्यु-तथ्य उसे विचलित नहीं कर पाता–मुझे तो फाँसी की कल्पना सदा मुग्ध ही करती रही है। उसमें साँप की आँखों सा एक अत्यंत तुषारमय, किन्तु अमोघ सम्मोहन होता है। एक सम्मोहन, एक निमंत्रण जो कि प्रतिहिंसा के इस यंत्र को भी कवितामय बना देता है, जो कि उस पर बलिदान होते हुए अभागे– या अतिशय भाग्यशाली को जीवन की एक सिद्धि देता है, और उसके असमय अवसान को भी सम्पूर्ण कर देता है।

लेखक की टिप्पणी 'शेखर : एक जीवनी' पृष्ठों से गुजरते हुए वक्तव्य विषय काफी स्पष्ट कर देती है–जाहिर है कि शेखर के जीवन को झपट लेने की प्रतीक्षा करती आसन्न मृत्यु उसे विचलित नहीं करती। हम उसे आत्म-चिन्तन में रत पाते हैं–मैं क्या हूँ? मेरा ममत्व क्या है? जिसके लिए

इतनी शक्ति व्यय की जा रही है; इतना आयोजन हो रहा है; इस जीवन की सत्यता क्या थी? वायु में उड़ती धूल पर खिंचा गया, और वह? निरन्तर क्षणों की है : पर क्षण, क्षणभंगुर है। मैं भी हूँ। मुझमें जो कुछ जलता है, उसे मुझे इसी क्षण कह डालना है, क्योंकि वह भविष्य की वस्तु है, मैं उसे कहे बिना रुक नहीं सकता।"[9]

डॉ० राय शेखर की काल-चेतना (या कि अज्ञेय की) भारतीय काल-चेतना और पश्चिमी काल-चेतना के पार्थक्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं–शेखर की काल-चेतना पश्चिमी काल-चेतना नहीं है जो मूलतः ऋतु रेखानुसारी है, वरन् वह उस डमरू की तरह है जो एक बड़े वृत्त में घूमता है। काल की वृहत्तर, चक्राकार गति के साथ अत्यंत वर्तमान क्षण के प्रति गहरा लगाव–"काल का वृत्त भी, और उस वृत्त पर डमरू द्वारा प्रतीकित क्षण-चेतना भी जो अतीत-वर्तमान भविष्य की नित्य शृंखला स्वीकार करती हुई भी अपनी दृष्टि केन्द्रित कर रही है उस क्षण पर ही जो यथाशक्य छायारहित क्षण है–स्मृति ओर आकांक्षा दोनों के संस्पर्श से यथासंभव मुक्त है। यह एक निरवधि, प्रवहमान अस्ति है–प्रत्यवर्त्ती सनातन काल के चक्र पर अविखंडनीय कालाणुओं का अजस्र क्रम।[10]

यह ठीक है कि शेखर अभी किशोर ही है किन्तु पौर्वात्य और पाश्चात्य काल-चेतना जैसे जटिल भाव-बोध पर भावात्मक और वैचारिक वक्तव्यों पर शंका तो की ही जा सकती है। किन्तु यह चेतना उपन्यासकार अज्ञेय की है। अज्ञेय की वैचारिकी और भावात्मक अंगुली-निर्देशन शेखर की काल-चेतना में प्रवाहित होती है। निश्चित तौर पर अज्ञेय की काल-चेतना, जो शेखर की काल-चेतना में अनुस्यूत है, जब तक हम इस बात का ध्यान नहीं रखते 'शेखर : एक जीवनी' के न कथ्य और न ही उसके शिल्प का हम आशंसन कर सकते हैं।

शेखर इसी काल-चेतना से युक्त मनः स्थिति में अपने जीवन का प्रत्यावलोकन करता है। शेखर अपनी विद्रोही और क्रांतिकारी ऊर्जा का प्रत्यावलोकन करता है। वह अपने अतीत को याद नहीं करता है, बल्कि वह उसे जीता है। शेखर अपनी जीवन-यात्रा के अंतिम पड़ाव पर पहुँचकर अनुभव करता है कि उसके जीवन यात्रा में कैसे-कैसे भटकाव और विचित्रता के क्षण आये हैं। उसे अनुभव होता है कि भटकाव भी उसे प्रेरणा देता है, जिससे विजय के अंकुर फूटते हैं। जो अपराध नहीं है और उसके लिए फाँसी दी जाए। अज्ञेय के अनुसार फाँसी होती है और तीसरे भाग में

वह हिंसावाद से आगे बढ़कर एक स्वतंत्र और पूर्ण मानव बनकर [illegible]
डॉ० राय अपना तर्क यह देते हैं कि शेखर का अभी तीसरा भाग [illegible]
नहीं हुआ है अत: हमारा [illegible] प्रश्न यह नहीं है कि [illegible]
शेखर स्वातंत्र्य की खोज में लगे विद्रोही के रूप में आता है और [illegible]
हमारा विवेच्य विषय हो सकता है।

अज्ञेय के [illegible] भिन्न भाव, विषय क्षेत्र के [illegible]
बाबा नागार्जुन का 'बलचनमा' का दूसरा भाग प्रकाशित होने से [illegible]
बाबा का स्वप्न भारत के भविष्य का स्वप्न (भविष्य) 77 के [illegible]
बाद दरकने लगता है और 'बलचनमा' का दूसरा भाग उनके वीभत्स [illegible]
(गाली) का शिकार बन कर रह जाता है किन्तु काल-प्रवाह [illegible]
गत्यावरोध के बाद भारत की मूल चेतना सनातनता का शेखर शिकार [illegible]
रह जाता है और उसकी सारी ऊर्जा, सारा विद्रोह और [illegible]
स्वरूप ठंडा पड़ जाता है। किशोरावस्था और युवावस्था वास्तव में क्रांति-[illegible]
होता है किन्तु धीरे-धीरे उसकी धुरी अतीत के खूँटे से बँधने लगती है
फलत: लेखन वहीं का वहीं ठहर कर रह जाता है। दरअसल यह तथ्य [illegible]
साइकी की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है जहाँ भारतीय समाज के
आरंभिक प्रगतिशीलता का हस्र वेदवाद, उपनिषदवाद या उसकी प्रतिगामि[illegible]
में जाकर ठंढी पड़ जाती है। भारत की सामाजिक-संस्कृति के बीच विभिन्न
प्रकार के धार्मिक उपद्रवों की वर्तमान कहानी तो है। 'जानकी जय यात्रा' में
अज्ञेय भाग लेते हैं, लेकिन नागार्जुन नहीं लेते। ये हैं अपने समय के प्रतिगामी
और प्रगतिशील! 'शेखर : एक जीवनी' के पहले दो भागों में अपनी
रूमानियत के लिए मशहूर लेखक की कविताई के प्रति सम्मोहन संभव है
डॉ० गोपाल राय जैसे प्रजातांत्रिक लेखक कथा-लेखन के [illegible] और
समीक्षक नजरअंदाज कर जाते हैं, कोई जरूरी नहीं कि परवर्ती काल के
सामान्य पाठक या सामान्य लेखक उस बात को नहीं समझ पायें। हमारे
समझ को सहारा देते हैं, ''मुद्राराक्षस 'मनुष्य को धर्म गैर बराबरी सिखाता है
हर तरह की गैर बराबरी को विनयपूर्वक स्वीकार करना धर्म ही सिखाता है
वह बेईमान से बेईमान सूदखोर महाजन को सामाजिक स्वीकार यह कहकर
दिलाता है कि उसके भाग्य में यह सब कुछ लिखा हुआ था। महाजन द्वारा
लूटे हुए व्यक्ति को धर्म प्रतिरोध करने से यह कहकर रोकता है कि उसकी
बदहाली या उसका लूटना-पिटना विधि का विधान है। अज्ञेय ने जानकी
यात्रा (बाबरी मस्जिद के ढाहने से दस वर्ष पहले) के अपने दस्तावेजों में

जिस 'एपिक' ने जातीय स्मृति खोजी है वह इस विधान का शर्मनाक नमूना है।''[11]

ध्यान देने की बात है कि जहाँ ऋत समर्थक कवि-समीक्षक वामपंथ की वफादारी से क्षुब्ध होते हैं—धर्मांधता के प्रति वफादार होना एक बड़ी उपलब्धि मानते हैं।

धार्मिक पुनरुत्थान के प्रति सचेत लेखक की प्रवृत्तिगत तीव्रता का हस्र अपनी योजना को तिलस्मी प्रश्न में तब्दीली के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। रूमानी भावुकता और वास्तविक सच्चाई के बीच 'शेखर : एक जीवनी' का तीसरा भाग हमारे समझदार आलोचकों के बीच मुँह बाये खड़ा है। इस प्रश्न का उत्तर तो अज्ञेय के पास था, कम-से-कम वह सच तो कह जाते हैं—'शायद कविता ही उनकी सीमा है।' अज्ञेय किसी प्रजातांत्रिक विधा कथा-साहित्य में अपनी जातीय स्मृति के चिह्न नहीं खोज सकते थे, कविता (एपिक) में ही उसे खोजा जा सकता था।

सामाजिक और राजनीतिक रूप से प्रतिबद्ध बाबा नागार्जुन ने अपने 'बलचनमा' के प्रति क्या-क्या उम्मीदें पाल रखी थी, उद्धृत पंक्तियाँ ही अधिक बोलेंगी—''एक मुँह लगे पाठक से यह पूछने पर कि 'बाबा! आपका बलचनमा अब कहाँ होगा?' नागार्जुन ने विक्षुब्ध स्वर में कहा था, 'होगा साला कहीं किसी ग्राम पंचायत का सरपंच बना बैठा। लेखक के इस उत्तर से लगता है कि उसने अपने चरित्रों से क्या उम्मीद की थी और सामाजिक जीवन के बीच पड़कर वे क्या से क्या हो उठते हैं। डॉ० गोपाल राय ने बलचनमा की समीक्षा लिखते हुए यह अपेक्षा की थी कि शायद बलचनमा का दूसरा भाग लिखने वाले थे। किन्तु—बलचनमा से कितने असंतुष्ट हैं उससे दुबारा मिलकर अपने किये-कराए पर पानी फरेंगे।''[12]

उक्त दो समकालीन लेखकों के सामाजिक सरोकारों के प्रतिबद्धता के ये अलग-अलग दस्तावेज हैं। जिन लेखकों ने शेखर : एक जीवनी को उपन्यास माना है उन्हें जानना चाहिए कि वह उपन्यास अपने आरंभिक दो भागों में प्रतिगामिता के विरुद्ध था। यदि आगे इसकी परिणति इसी रूप में प्रतिफलित होती तो अज्ञेय के उस ऋत का क्या होता, जिसके प्रति वह वंशानुगत रूप से प्रतिबद्ध थे।

कुल मिलाकर शेखर की यह भावना शैशवकालीन भावना से है जो बिलकुल अन्तर्मुखी और चिन्तनशील है। वह चारों ओर के वातावरण से टकराकर, बाहर से हार कर कछुए की तरह अपने अहं की खोल में प्रविष्ट

कर जाता है, स्व में केन्द्रित। वह चिन्तन करता है, "मैं अकेला ...
कि मैं उस प्रकार का नहीं हूँ, जिसे लोग अच्छा कहते हैं, मैं पढ़ता नहीं,
किसी का कहना नहीं मानता, ढीठ लड़का हूँ, शैतान हूँ।"

वस्तुत: ये निर्णय समाज के हैं, बाहरी हैं, जो शेखर पर आरोपित कर दिये गये हैं और शोर आत्मलीन होकर अपने से समाज को ... 'सविनय अवज्ञा' के ढंग का विद्रोह करता है। वह एकांत में 'अच्छे', ... एवं 'ईश्वर' के बारे में सोचता है।

शेखर बंधनों से घृणा करता है। उसकी विद्रोही चेतना पक्षियों से प्रेरणा ग्रहण करती है। माली से जंगल के भेद जान जाने के बाद ... उसकी कल्पना का स्वर्ग बन जाता है। पूर्ण उन्मुक्तता! निचाट बंधनहीनता!

शेखर की विद्रोही चेतना कई रूपों में दिखायी देता है। इसे डॉ० गोपाल राय ने अलग-अलग विस्तार से रेखांकित किया। परिणति अधूरी ... तीसरे भाग की योजना लगभग अनुत्तरित रह जाती है।

विद्रोह और क्रांति-चेतना में निश्चित रूप से अंतर होता है। ... शेर विद्रोही है, तो उसकी चेतना क्रांति की ओर कैसे मुखर हो सकती है? व्यक्तिगत प्रेम, कुछ न पाने और पाने और न पाने के रास्ते में माता-पिता का हस्तक्षेप और उसके परिणामस्वरूप उसके बच्चे में प्रतिकार का भाव ... क्रांति कैसे हो सकती है। हाँ, यह बात अवश्य है कि शेखर के कुछ कार्य-व्यापार अवश्य ऐसे हैं, जिसे हम क्रांति-चेतना के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। विद्रोह एक मूल्यहीन प्रवृत्ति है। विद्रोही भाग्यवादी और नियतिवादी होता है—इसी कारण वह मानवीय शक्ति से पृथक् किसी अलौकिक और अलक्षित शक्ति में विश्वास करता है—जबकि क्रांतिकारी मानवीय शक्ति के अतिरिक्त किसी अन्य शक्ति में विश्वास नहीं करता। ... ने विद्रोही (Rebel) और क्रांतिकारी (Revolutionary) के अंतर पर व्यापक रूप से विचार किया है।

"Rebellion is, by nature, limited in scope. It is no more than inchorent pronouncement. Revolution on contrary, originates in the realm of ideas. Specially, it is the injection of ideas into historic experience while rebellion is only the movement which lead from individual experience into the realm of ideas-Rebellion is always that of a fruitless struggle with facts, revolution is an attempt to shape action to ideas, to fit the world into a theretical frame."[14]

विद्रोही और क्रांतिकारी पर विचार किया जायेगा तो शेखर मूलत: विद्रोही सिद्ध होता है। किसी गलदश्रु भावुकता का शिकार चरित्र में क्रांति-चेतना की संभावनाओं की बेमेल खिचड़ी नहीं पकायी जा सकती। अस्तु डॉ० गोपाल राय शेखर के क्रांतिकारी और विद्रोही प्रेमी दोनों रूपों की तुलना करते हुए लिखते हैं कि "अज्ञेय स्वयं क्रांतिकारी रहे हैं पर जिस प्रकार उन्होंने इस मार्ग को छोड़ा, लेखन की वृत्ति अपनायी और ब्रिटिश सेना में भर्ती हुए; वह उनकी क्रांति में निष्ठा की कमी का द्योतक है। संभवत: इसी कारण शेखर का यह रूप हमें अधिक प्रभावित नहीं करता। दूसरी ओर, कविता और उपन्यास दोनों में, अज्ञेय प्रेम के अद्भुत चितेरे के रूप में सामने आते हैं।"[15]

कहा जा सकता है शेखर एक व्यक्ति का निजी दस्तावेज है। यद्यपि उसमें युग-संघर्ष का प्रतिबिम्ब है किन्तु उसका अति भावुक चरित्र उसके संघर्ष की कहानी पर प्रश्नचिह्न खड़ा कर देता है।

अंतत: 'शेखर : एक जीवनी' एक व्यक्ति की कथा है, जिसमें व्यक्ति की आजादी, गुलाम देश की आजादी, मूल्य-भ्रांति और अनेक तरह की विडम्बनाओं की राह से गुजरती है। शेखर बुद्धिवाद, राष्ट्रीय चेतना और लोक की आकांक्षाओं से कितनी दूर तक अपनी भूमिका अदा कर सकता है या इन आकांक्षाओं की पूर्ति में वह कहाँ तक विच्छिन्न हो सकता है—इन सारी जटिलताओं के साथ औपन्यासिक गतिविधि में शेखर को देखा जा सकता है।

संदर्भ :

1. शेखर : एक जीवनी, दूसरे संस्करण की भूमिका से
2. प्राक्कथन, अज्ञेय और उनका कथा साहित्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
3. शंभुनाथ, दुस्समय में साहित्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ.-139 से उद्धृत
4. अज्ञेय और उनका कथा-साहित्य, पृ.-75
5. आत्मनेपद, पृ.64-66
6. शेखर की भूमिका से, पृ.10
7. अज्ञेय और उनका कथा-साहित्य, प्राक्कथन
8. शेखर : एक जीवनी, पृ.-15
9. अज्ञेय और उनका कथा-साहित्य, पृ.-46 से उद्धृत
10. वही, पृ.-96-97

11. मुद्राराक्षस, आलोचना का समाजशास्त्र, नेशनल [illegible], दिल्ली, पृ. 301
12. विजय बहादुर सिंह, नागार्जुन का रचना संसार, वाणी [illegible], दिल्ली, पृ. 155
13. शेखर, पृ. 57
14. [illegible] सिंह अज्ञेय : कथाकार और विचारक, वाणी [illegible], दिल्ली, पृ.--25
15. डॉ० गोपाल राय, अज्ञेय और उनका कथा-साहित्य, पृ. 10[illegible]

एसोसिएट [illegible]
विश्वविद्यालय हिन्दी [illegible]
बी.आर.ए. बिहार [illegible]
मुज़फ्फरपुर